चतुर्थ अध्याय

रेवतीसरन शर्मा के नाटकों में रंगमंचीयता एवं अभिनेयता

चतुर्थ अध्याय

'रेवतीसरन शर्मा के नाटकों में रंगमंचीयता एवं अभिनेयता"

4.1 रंगमंचीयता -

नाटक का दृश्य पक्ष है 'मंच' । 'मंच' ही वह तत्व है जहाँ पर नाटक अपनी प्रभावोत्पादकता सिद्ध करता है । नाटक रंगमंच को जन्म देता है । नाटक और रंगमंच एक दूसरे के पूरक हैं । डा. लक्ष्मीनारायण लाल ने नाटक और रंगमंच के पारस्पारिक संबंध पर प्रकाश डालते हुए लिखा है - "रंगमंच की आत्मा नाटक अथवा नाटकीयता है, और उसका सनातन धर्म प्रदर्शन हैं ।" [1] 'मंच' कोई एक तत्व नहीं बल्कि विभिन्न स्वतंत्र, अनेक छोटे-छोटे तत्वों का समूह हैं । रंगमंच प्याज की छिलके की तरह है उसके एक-एक छिलके को निकालते जाइएगा तो लगेगा कि यही रंगमंचीय कला है । याने कभी दृश्यसज्जा, कभी संवाद, कभी अभिनय एक छिलके को अलग छिले जायेंगे तो रंगमंच का सही स्वरूप हाथ नहीं लगेगा । रंगमंच कला संपूर्ण वस्तु है, और उसी में उसका सारतत्व निहित है । अर्थातः नाटक के मंचीय स्वरूप को विभिन्न शाखाओं - निर्मित मंच व्यवस्थापन, निर्देशन, अभिनय, रूपसज्जा, दृश्यसज्जा, प्रकाश योजना, पार्श्व ध्वनि, संगीत संयोजन, पूर्वाभास, विज्ञापन, ध्वनि प्रक्षेपन, संवाद योजना आदि समग्र तत्वों के वर्तमान स्वरूप का विवरण उस में प्रस्तुत हैं ।

रंगमंच के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए डा. चंदूलाल दुबेजी ने लिखा है - " रंगमंच से तात्पर्य सिर्फ स्थूल वस्तू से नहीं, बल्कि रंगमंच से संबंध विविध साधन एवं प्रवृत्तियों से हैं ।" [2] रंगमंच संबंधी बातों में नाटकीय निर्देश, रंगमंच की व्यवस्था तथा पात्रों की वेशभूषा आदि पर दृष्टि रखनी पड़ती है । वेशभूषा में पात्रों की पोशाक और अलंकारणों के संकेत दिये जाते हैं ।

रंगमंच के बारें में डा. नरनारायण राय ने लिखा है - "रंगमंच नाटक का आशन्तरिक सत्य है, और नाटक का यह सत्य जब अपने प्रदर्शन दुवारा मूर्त रूप पाता है, तो उसे हम रंगमंच कहते हैं । यद्यापि इस शब्द

का पारंपारिक अर्थ वह स्थान या मंड़प है, जहाँ नाटक खेले जाते हो, जिसका ठीक अंग्रेजी पर्याय स्टेज है ।"[3] रंगमंच के लिए कभी थियेटर (Theatre) तो कभी स्टेज (Stage) जैसे अंग्रेजी शब्दों का भी प्रयोग होता है । अर्थातः रंगमंच के एक सूक्ष्म अर्थ के साथ उसका एक स्थूलदर्शी अर्थ भी जुड़ा हुआ है । डा. अज्ञात ने रंगमंच के व्यापक और सीमित अर्थ पर प्रकाश डालते हुए लिखा है - "रंगभूमि या रंगमंच एक दूसरे के पूरक हैं, जिसके अंतर्गत रंगशाला, काव्य (नाटक) अभिनय (प्रयोक्ता, निर्देशक, रंगकर्मी और रंगशिल्पी) तथा सामाजिक (प्रेक्षक) सभी आ जाते हैं । अपने सीमित अर्थ में 'रंगमंच' रंगशाला का वाचक बनकर रह गया है ।"[4]

4.2 हिंदी रंगमंच -

संस्कृत रंगमंच के मृत:प्राय हो जाने के बाद भारतीय रंगपरंपरा एक प्रकार से क्षीण होकर ही रह गई थी । मध्यकाल में पूरी नाट्य और रंगपरंपरा का स्थान महत्त्वपूर्ण रहा । उस काल में केवल साहित्यिक नाटक लिखे गये । रंगपरंपरा का ऱ्हास हो गया था ।

4.2.1 आरंभिक स्थिति -

19 वी शताब्दी में नवीन पदधति से नाट्य मंचीकरण के जो प्रयोग होने लगे, उसके लिए अंग्रेजी शिक्षा कारण बनी । इस समय एक और लोकनाट्यों की परंपरा चल रही थी, तो दूसरी ओर पारशी थियेटर, सुसंगठित होकर उभर रहा था और लोकनाट्यों की परंपरा चल रही थी और लग-भग एक शताब्दी तक यह लोगों पर हावी रहा । इसकी मूल प्रेरणा पाश्चात्य रंगमंच था । उस काल में केवल साहित्यिक नाटकों की भरमार हो गयी । अपनी नाट्यपरंपरा के अभाव में इन नाटकों की प्रस्तुति में अनेक कठिनाईयाँ आती रही । इसतरह नाटक और उसकी प्रस्तुति में एक सूत्रता न आ सकी । नाटक एक तो केवल मनोरंजन का साधन समझा गया, जो लोकनाट्य के रूप में रहा और उसका साहित्यिक मूल्य न के बराबर था, तथा उसे निरासाहित्यिक जामा पहनाया गया और उसे रंगमंच से अलग कर दिया गया । अतः हिंदी नाटककारों को रंगमंच का ज्ञान परंपरा से नहीं मिला । संस्कृत नाट्यपरंपरा के अधूरे ज्ञान का आधार लेकर उन्हें चलना पड़ा । इस काल के रंगमंच के बारे में डा. वीणा और सुरेश गौतम का कथन है कि, "अंग्रेजों का भारत आगमन नाटक रंगमंच के लिए पुनरोद्धार का झरोखा था । झरोखे से निकली ठंढ़ी बयार ने नाटक रंगमंच की दूबों को पुनः अंकुरित हरित कर दिया और इसी

समय भावे की सांगलीकर मंडली, अतुलेकर नाट्य मंडली, किर्लोस्कर आदि मराठी नाट्यमंडलियों ने हिंदी नाटक को रंगमंच दिया ।"[5]

इस प्रकार 19 वी शताब्दी में एक और पारसी रंगमंच अपना विकास कर रहा था तो दूसरी ओर उसकी प्रतिक्रिया में उसकी ओछि रसीकता से विमुख होकर प्रबुद्धजनोंने एक समानांत्तर अव्यावसायिक रंगमंच की शुरूआत की । डा. चंदूलाल दुबे लिखते हैं - "इस प्रकार हिंदी रंगमंच की दो धाराओं का प्रचलन प्रारंभ हो जाता है । एक व्यावसायिक कलाकारों का रंगमंच बनता है, तो दूसरा शौकिया रंगकर्मियों का रंगमंच जिन्हें क्रमशः व्यावसायिक रंगमंच तथा शौकिया (अव्यावसायिक) रंगमंच कहा जाता है ।"[6]

4.2.2 भारतेंदु युग -

भारतेंदु के सामने संस्कृत पाश्चात्य तथा पारसी नाट्यपरंपरा थी, लेकिन उन्होंने इससे अलग अपना स्वतंत्र रंगमंच निर्माण करने का प्रयास किया । हिंदी नाट्य जगत में भारतेंदु केवल युगप्रवर्तक थे अपितु वे एक अभिनेता दिग्दर्शक एवं नाट्यचिंतक थे । डा. सुभाष भाटिया लिखते हैं कि - " हिंदी में सर्वप्रथम भारतेंदु ही अपने नाटक, 'निबंध' में हिंदी रंगदर्शन परंपरा की नींव डाली ।"[7]

4.2.3 प्रसाद युग -

जयशंकर प्रसाद ने भारतेंदु के मुकाबले कहीं अधिक गंभीर नाटक हिंदी रंगमंच को दिये, परंतु उसके लिए समुचित रंगमंचीय सुविधाएँ जूटा पाना कठिन कार्य है । अतः उनके नाटक अभिनित होने की अपेक्षा पाठ्य होकर रह गये । प्रसाद काल में रंगमंच का विकास अवरूद्ध हुआ था ।

4.2.4 प्रसादोत्तर युग -

प्रसाद के बाद हिंदी नाटक अधिकाधिक रंगमंच सापेक्ष होने लगा । लक्ष्मीनारायण लाल के एकाधिक नाटक उनके प्रयोगशीलता के परिचायक बने । 'जगदीशचंद्र माथूर' का 'कोणार्क' भी इसी रंग आंदोलन की एक कड़ी बन गया । 'धर्मवीर भारती' का गीतिनाट्य 'अंधायुग' मंचीयता की दृष्टि से एक अद्‌भुत रम्य प्रयोग रहा । उसे कल्पनातीत सफलता मिली । 'मोहन राकेश' का आगमन रंगमंच की आधुनिक भारतीय अवधारणा

को सही दिशा में बढ़ा ले गया । राकेश ने अस्तित्व के समस्या के साथ - साथ मध्यवर्गीय जीवन की टूटती - बिखरती आस्थाओं को तथा मजबूरियों को सीधे समकालीन मूहाँवरे में व्यक्त किया । डा. भगवानदास वर्मा ने लिखा है कि, "मोहन राकेश के तीनों नाटक हिंदी समकालीन रंगमंच के मील के पत्थर हैं ।" [8]

डा. शेष ने नाटककार और मंच के दिग्दर्शक दोनों की स्वायत्ता सत्ता को स्वीकार किया है । नाटयलेखन से शुरू उनकी नाटययात्रा, निर्देशन मंचन आदि क्षेत्रों में भी मजबूती से अपने कदम बढ़ाती रही । अपनी नवीनतम प्रायोगिक दृष्टि से उन्होंने हिंदी साहित्य को अनेक अविस्मरणीय नाट्य सुमनों की भेट दी । वे हिंदी का अपना रंगमंच निर्माण करना चाहते थे । डा. भगवानदास वर्मा लिखते हैं कि, "जातीय रंगपरंपराओं के साथ पश्चिम की रंगदृष्टि को सूझ के स्तर पर समन्वित करने की परंपरा में औरों के साथ पर औरों से अलग स्थान नाटककार शंकर शेष का रहा है । सतत और पायेदार प्रयासों में विकसित रंगकर्म को उनकी समझ एक से बढ़कर एक चीज़ देती रही ।" [9]

इस प्रकार आज का रंगमंच प्रस्तुतियों और प्रयोगों के दौर से जिस तेजी के साथ गुजर रहा है, वह विकास की अनेक उपलब्धियों के साथ इसे आगे भी जोड़ेगा । लेकिन आज भी हिंदी रंगमंच आवश्यक उतना संगठित रूप से विकसित नहीं हुआ है । डा. लाल ठीक ही लिखते हैं कि, "हमारे यहाँ तो अभी सारे रंगतत्व बिखरे हैं, इसलिए अभी तो हमारी सारी शक्ति रंगमंच संगठन पर लगी है ।" [10] इस प्रकार आज भी हिंदी का रंगमंच संगठन विहित है, परंपरा से टूटा हुआ, लोक और जीवन से दूर तथा दर्शक हीन है । अतः हिंदी को ऐसे रंगमंच की आवश्यकता हैं, "जिस में अपनापन हो, जो अपनी मिट्टी और बुनियादी से जो अपने लोक जीवन से जुड़ा हो, वही हिंदी का अपना रंगमंच बनने की क्षमता रखता है ।" [11]

4.3 विवेच्य नाटकों की मंचीयता -

4.3.1 चिराग़ की लौं -

आज नाटक की सफलता का सर्वोत्तम मानदंड़ रंगमंचपर उसकी अभिनेयता को ही किया जाता है । जो नाटक रंगमंच पर अभिनय की कसौटी पर खरा नहीं उतरता । नाट्य मर्मज्ञ और रंगकर्मी उसे नाटक तक

मानने को तैयार नहीं होते । अतः नाटककार को यह आवश्यक है कि नाटक की रचना करते समय रंगमंच और अभिनय की सभी संभावनाओं का पूर्णतया ध्यान में रखकर ही सृजन करे ।

'चिराग़ की लौं' नाटक के लेखक रेवतीसरन शर्मा का रंगमंच से गहरा संबंध है । उनकी अपनी मंच संस्था 'कला साधना मंदिर' है । वे दिल्ली नाट्य संस्था भारतीय नाट्य संघ के उपप्रधान है । अतः रेवतीसरन शर्मा ने 'चिराग़ की लौं' यह नाटक रंगमंच और अभिनेयता को दृष्टि में रखते हुए लिखा है । स्वयं नाटककार का कथन है कि, '' यह मेरा पहला तीन अंकी नाटक है, जिसे मैंने स्टेज पर खेलने के लिए लिखा है ।'' [12]

4.3.2 अँधेरे का बेटा -

'रेवतीसरन शर्मा' ने यह नाटक रंगमंच और अभिनेयता को दृष्टि में रखते हुए लिखा है । स्वयम् नाटककार का कथन है कि - ''नाटक एक सैट पर खेला जा सकता है और इसके लिए आठ पात्रों और मामूली साज सामान की ज़रूरत है । इस ऐतबार से इसे मंच पर खेलना आसान है और मंचपर पेश करने की ज़रूरतों का मुमकीन हद तक खयाल रखा गया है ।'' [13]

4.3.3 न धर्म, न ईमान -

'न धर्म, न ईमान' नाटक रंगमंच तथा अभिनेयता की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है । यह नाटक पहले 'टूटे सपने' नाम से 'कला साधना मंदिर', दिल्ली द्वारा रंगमंच पर सफलतापूर्वक प्रदर्शित हो चुका है । शर्माजी ने यह नाटक रंगमंच और अभिनेयता को दृष्टि में रखते हुए लिखा है ।

4.3.4 निर्देशन एवं मंच व्यावस्थापन -

'चिराग़ की लौं' नाटक के प्रथम मंचन में निर्देशक विषयक कार्य 'कला साधना मंदिर', दिल्ली के निर्देशक इस्लामुद्दीन द्वारा संपन्न हुआ । प्रस्तुत नाटक निर्देशकीय क्षमता से परिपूर्ण है । सन 1961 के आस-पास दिल्ली के रंगमंचपर केवल हास्य विनोदपूर्ण नाटकों को ही सफलता मिलती थी । उसी समय

इस्लामुद्दीन को 'चिराग़ की लौं' जैसे विचार प्रधान एवं गंभीर नाटक के निर्देशन और मंचन में काफी सफलता मिली ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक का प्रथम मंचन श्री. बी. बी. कारंथ के निर्देशन में 'कला साधना मंदिर' दिल्ली के रंगमंच पर संपन्न हुआ । प्रस्तुत नाटक निर्देशकीय क्षमता से परिपूर्ण हैं । यह नाटक पहले 'टूटे सपने' नाम से 'कला साधना मंदिर' दिल्ली द्वारा रंगमंच पर सफलतापूर्वक प्रदर्शित हो चुका है ।

"नाट्यसृष्टि वह विधा है, जिस में मानवी जगत संबंधी प्रकृत अनुकरण एवं उसका कलात्मक अभिनय पात्रों के "ऐकशन ओर उनके चरित्र चित्रण द्वारा समाज के लिए सहज आस्वाद्य हो, अभिव्यक्त हो, और उस में वे अपने को ही उस भूमिका में समझकर कुछ देर के लिए आत्मविभोर हो उठे । वे नाट्य विधान और प्रदर्शन में अपने जीवन में एक ऐसा चमत्कारी प्रतिबिंब सा देखे जो जिवंत लगे ।" [14]

4.3.5 अभिनय -

दृश्यकाव्य होने के कारण नाटक की सफलता का सबसे प्रबल प्रमाण उसकी अभिनेयता अथवा मंचीय प्रस्तुति है । आ. भरत के अनुसार "अभि" पूर्वक "णीअ" धातु के योग से 'अभिनय' शब्द निःसृत होता है । उनके अनुसार अभिनय शब्द का अर्थ संमुख ले जाना । नाटक के प्रसंग में शाखा, अंग, उपांग सहित जो प्रक्रिया कवि के अभिप्रेत को पाठक के समक्ष व्यक्त कर देती है, उसे अभिनय कहते हैं, अभिनय की इस प्रक्रिया के कर्ता को अभिनेता कहते हैं ।" [15]

"अभिनयति हृदयगत भावान प्रकाशयति इति"

"अंतरंग के रागद्वेषादि भाव प्रकाशित करना याने अभिनय ।" इस प्रकार से इसकी परिभाषा करना उचित लगता है - "वाणी, शारीरिक चेष्टा, मुखमुद्रा एवं वेशभूषा आदि द्वारा मानसिक भाव व्यक्त करना उसी प्रकार प्रमाता को रस की अनुभूति करा देना यही मुख्य रूप से अभिनय के उद्देश्य हैं ।" [16]

अभिनय-तत्त्व -

रंगमंच अभिकल्पना में अभिनय का महत्त्वपूर्ण स्थान है । पात्रों के हाव-भाव उनके क्रियाकालाप और उनकी मानसिक दशाएँ वास्तव में अभिनय ही हैं । हमारे आचार्यों ने आंगिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक इन चार भागों में अभिनय को विभाजित किया है । लेकिन अभिनय में इनका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रहता, वे एक दूसरे में घुल-मिल जाते हैं ।

रेवतीसरन शर्मा के 'चिराग़ की लौं', 'अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' नाटक अभिनेय की दृष्टि से सफल हैं । 'चिराग़ की लौं' नाटक की विशेषता है कि यह नाटक गंभीर और विचार प्रधान है । अतः अभिनय की दृष्टि से ये नाटक अभिनेता के केवल शारीरिक अर्थातः बाह्यपक्ष पर ही विचार करना और संवादों को याद करके उच्चरित करने तक सीमित नहीं होती, अपितु उसके चरित्रों को निभानेवाले अभिनेताओं का मानसिक, बौद्धिक और शारीरिक पक्ष का ऊँचे दर्जे का होना आवश्यक हैं । क्योंकि अभिनेता ही ''लिखित नाटक के परे भी भावना और अर्थ के कई बंद दुवार खोलता है । चरित्र को देश और काल की भूमिपर साकार कर वह नाटककार की तुलना में ऑखों और अन्य इंद्रियों के लिए आस्वाद के कई आयाम उपस्थित करता है ।'' [17]

पात्र-परिचय -

'चिराग़ की लौं' नाटक में निम्न अभिनेताओंने अभिनय किया है -

जैसे - सुरेंद्र वर्मा (किशोर), साधना गुप्ता (तारा), वाणी सेठी (रानी), सतीश सहगल (जयंत), सुरेंद्र सेठी (गिरीश), सी. एस. नागर (सेठजी), विनोद चोपड़ा (मुनीमजी), बालकृष्ण सूद (मि. मेहता), उर्मिल राजपाल (मिसेज मेहता), वेद राही (संपादक), शारदा चोपड़ा (सेल्स गर्ल), शकुंतला सक्सेना (आया), सुरेंद्र शर्मा (ड्राइवर), पवनकुमार (अर्दली), वेद राही (गंगाराम), तार्थराम आज़ाद (डांस मास्टर), राजगुप्त राजीव (नसीम) आदि ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक में निम्न अभिनेताओं ने अभिनय किया है ।

जैसे - विमल आहूजा (दिनेश), श्रीमती साधना गुप्ता (दया), श्रीमती उर्मिल राजपाल (दादी), कुमारी वीणा सेठी (चाची), बालकृष्ण सूद (रामदयाल), श्री. के. सी. जोशी (डाक्टर), शांतिस्वरूप कालरा (पिता), श्री. साहनी (पंड़ित) आदि ।

नाटक एक प्रयोग मूलक कला है । नाटक की कलात्मक सार्थकता तभी व्यक्त होती है, जब इसका अभिनय किया जाता है । 'रेवतीसरन शर्मा' स्वयम् एक अच्छे निर्देशक और नाटककार होने के कारण विवेच्य नाटकों में उन्होंने अभिनेयता की दृष्टि से अनेक संकेत दिये हैं जैसे -

चिराग़ की लौ -

किशोर कुर्सी पकड़ता है, तारा उत्तरती है, मुसकराते हुए, गहरी साँस लेकर, उठते हुए, सोफ़े से उठकर, थके स्वर में वह आगे बढ़ती है, किशोर तेजी से बढ़कर उसे बाजू से पकड़ लेता है, झटककर बाह छुड़ा लेती है, कान पकड़कर, अन्दर आते हुए, उसकी बात से खिन्न होकर, घबराकर, भड़ककर, उठ खड़ा होता है, दूसरे कमरे की ओर जाते हुए, कमरे पर नजर डालते हुए, नाक चढ़ाकर, आगे बढ़कर दरवाजे पर पड़े पर्दा को थाम लेती हैं , पर्दा छोड़कर किताबों की रैक की ओर झुकती हैं, हैराण होकर, घृणा से आदि ।

अँधेरे का बेटा -

खुश होकर, ट्राफ़ी लेकर सकीना की ओर जाते हुए, इशारा करके सिखाते हुए, दोहराते हुए, अन्दर से आकर, चौंककर, उत्तेजित होकर, शबनम दौड़कर फोन सुनने जाती है, फोन रख देती है, मुसकराकर उसकी बात का अनुमोदन करती है, सकीना को देखते हुए, गर्दन हिलाकर हाँ करती है, उतावली होकर, अपने कपड़े देखकर, बैठकर, फ्राक का कोना पकड़कर जरा अदब से झुकते हुए, उसे बनावटी ढंग से देखकर गंभीर होकर, चिढ़कर, लग-भग चीखकर, आँख मींचकर, गिलास आगे करके, थोड़ा लजाते हुए, रूमाल से माथा पोंछते हुए, भड़ककर बिलकुल दैरवाज़े तक जाकर पलटते हुए आदि ।

न धर्म, न ईमान -

साफ करते हुए, चौंकर, दया की तरफ देखता है, एक क्षण के लिए निरूत्तर होकर, दूसरी तरफ जाते हुए, व्यंग्य से, पास आकर उसकी आँखों में देखते हुए, मुसकराकर, सहसा उदास हो, नीचे की तरफ जाते हुए, बिलकुल पास आकर, तड़पकर, उसके मुँहपर हाथ रखकर, बाजुओं से पकड़ते हुए, बनावटी सोच की मुद्रा में, कटूता दूर करने के लिए, उसके हाथ-हार्थो में लेता है, दृढ निश्चय से, बाजुओं से पकड़कर, भावावेश से मुट्‌ठी भींचकर आदि ऐसे अनेक दृश्य में शारीरिक क्रिया-व्यापार के साथ वाणी व्यापर और भावदशाओं के मंचन के लिए अवसर है ।

शर्माजी के -'चिराग़ की लौं', 'अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' नाटक अभिनेयता की दृष्टि से महत्वपूर्ण नाटक है ।

'चिराग़ की लौं' नाटक की अभिनेयता की दृष्टि से यह विशेषतः है कि उस में संवादों के मध्य नाटकीय क्रियाओं के लिए अवकाश है । उसके पात्र मंचपर आकर केवल वार्तालाप नहीं करते अपितु भाव-मुद्रा, अंग-विकास, वेशभूषा तथा स्वरोच्चार द्‌वारा उस प्रसंग को यथार्थ की भावभूमिपर साकार करते हैं ।

डा. नरनारायण राव लिखते हैं -"खाली जगहों में अभिनयादि द्‌वारा भरना तभी संभव होता है, जब संवादों एवं घटनाओं के बीच अवसर उपलब्ध कराये जाए ।"[18] - ज्यों ?

जैसे -

"तारा - (पास आकर क़मीज का सामना पकड़कर प्यार से हिलाते हुए) उसे कुछ नहीं होगा । वो तो यहाँ है । (किशोर के दिल की तरफ इशारा करती है ।) ।

किशोर - अच्छा-अच्छा, मेरी बातें रिलाने की कोशिश न करो । अब जाकर नहा आओ । (बाहों में लेकर उसे अन्दर भेजने के लिए दरवाज़े की ओर ले जाता है ।) ।

तारा - (बाहों से निकलकर) नहा आऊंगी, ज़रा सुस्ताने तो दो । (सोफे पर थककर बैठ जाती है ।) ।

किशोर - (सोफ़े के हत्थे पर बैठकर उसके माथे पर हाथ फेरते हुए) थक गई ? (तारा निगाहें उठाकर उसकी ओर

देखते हुए आहिस्ता - आहिस्ता गर्दन हिलाकर बिना बोले इनकार करती हैं ।) झूठ मत बोलो । बंधा सामान खोलना, नये घर में लगाना और बिना किसी की मदद के - मै जानता हूँ कितना मुश्किल होता है ।" [19]

जैसे:अँधेरे का बेटा -

"निरूपमा - ओह ! वह तो बहुत बड़े राइटर हैं । (अपने कपड़े देखकर) देखिये सकीना बेगम, हम कपड़े बदलते हैं । कमरा यूँ तो ठीक है, लेकिन और कर दीजिए ! वे आएं तो कहिएगा मैं गुसल में हूँ । और हाँ, यह फूल बदल दीजिएगा । (नए फूल देती है) । बेबी के बालों में भी फूल लगा दीजिएगा । कपड़े तो अभी बदले हैं न ?

सकीना - जी हाँ !

निरूपमा - अच्छा (कमरेपर एक नज़र डालकर अंदर चली जाती है । बेबी हैरान -सी रह जाती हैं ।) ।" [20]

जैसे:न धर्म, न ईमान -

"दया - (उसके मुंहपर हाथ रखकर) अच्छा, अब अपने को कंकरी कभी नहीं कहूँगी !

दिनेश - (समझाते हुए) आखिर तुम अपने को इतनी छोटी क्यों समझती हो ? (बाजुओं से पकड़ते हुए) तुम में क्या कमी हैं ? वक्त ने तुम लोगों को गरीब बना दिया, पर अब भी तुम हमारा दिया तो नहीं खाते। हवेली में रहते हो तो किराया देते हो ।

दया - (उदास हो, बैठते हुए) पर दादी माँ के और ताऊजी के हम पर कितने एहसान हैं ।

दिनेश - (झुंझलाकर) क्या एहसान हैं ? घर की बची-,खुची सब्जी दे देना ? पूजी-मिनसी चीजें दे देना ? पुराने उत्तरे हुए कपड़े दे देना ? या जरूरत पड़ने पर रूपये दे देना, जो हमेशा वापस ले लिए जाते हैं ।" [21]

डा. गोविंद चातक ने अभिनय कला के संबंध में लिखा है कि "अभिनय कला में दो तत्वों का योग होता हैं - मूकाभिनय और वाणी । मूकाभिनय का संबंध हाव-भाव, मुखाकृति, गति और क्रिया व्यापार से होता है और वाणी मुख से निस्सृत मानवीय ध्वनि की विविध विशेषताओं, घनत्व, गुण और तारत्व से संबंध है । दोनों का योग रंगमंचपर जीवन की अभिव्यक्ति करता है ।"[22] अतः आंगिक अभिनय का संबंध नाटक में घटित घटनाओं में पात्रों की शारीरिक हल-चल, हाव-भाव, क्रिया-कलाप आदि से हैं । प्रस्तुत नाटक - 'चिराग़ की लौं' में आंगिक अभिनय के अनुरूप घटनाओं का चुनाव तथा पात्रों का विकास दिखाई देता है । यहाँ वाचिक और आंगिक अभिनय का एक सुंदर दृश्य दृष्टव्य है -

"किशोर - (कटुता, विषाद और वेदना से) अपने सपनों को पूरा करके, मेरे खयालों का खून करके, मुझे मेरे ईमान और आदर्श से महरूम करके तुम आज मुझे सहारा देने आयी हो ? (उसे कन्धों से पकड़कर) दूर हो जाओ मेरी नज़रों से ! (नीचे गिरा देता है । धीरे-धीरे मंच के अगले सिरे की ओर बढ़ते हुए, सामने शून्य में देखते हुए) अपने, ग़ैरों से मिल गये । ग़ैर अँधेरों से मिल गए -(यकायक खड़ा होकर पूर्ण निश्चय और आत्मबल के साथ) लेकिन मैं हारूँगा नही, क्योंकि मैं मैं नहीं हूँ .... (अपने हाथ कुल्हों पर रख लेता है और ऊपर की ओर देखते हुए चिराग़ की लौं की तरह तनकर) अँधेरे के सीने में दाग़ती हुई चिराग़ की लौं हूँ ।"[23]

अँधेरे का बेटा -

"संतोष - अच्छा नारंग साहब ! (हाथ आगे बढ़ाता है)

नारंग - (हाथ मिलाकर) तो शाम को ! (फिर मीरा की तरफ देखता है । मीरा 'हाँ' में सिर हिलाकर, हाथ जोड़कर नमस्ते करती है और उसके साथ संतोष हाथ हिलाता हुआ बाहर जाता है ।)

नीरू : हम भी बाहर तक चलते हैं ।"[24]

न धर्म, न ईमान -

"दया - (हाथ छुड़ाकर नीचे की तरफ़ जाते हुए) तुम यकीन नहीं करोगे, दिनेश, मैं तुम्हारे लिए कुछ करती हूँ, तुम से कुछ कहती हूँ, तुम्हारे पैरों में अपनी पलकें बिछाने की बात सोचती हूँ, तो मुझे लगता है .... (ज़रा तेजी से) मैं धन्य हो गई हूँ ! (और तेज़ी से) मेरे भाग खुल गये हैं ।

दिनेश - (ज़ोर से) ग़लत ! यह तुम्हारे अंदर अपने को छोटा समझने का भाव है, जो घर कर गया है ।"[25]

अभिनेता इस सारी आंगिक ओर वाचिक सृष्टि का उपयोग भावाभिव्यक्ति के लिए करता है । आंतरिक चित्तवृत्ति के प्रकाशन में तथा मनोदशाओं के प्रदर्शन में अभिनय का सात्विक पक्ष श्रेष्ठ बन जाता है । शर्माजी के चिराग़ की लौ, अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान नाटक में नाटककार ने आंगिक तथा वाचिक अभिनय विषयक जितने विस्तार से संकेत दिये हैं, उतने ही विस्तार से सात्विक अभिनय विषयक संकेत दिए हैं ।

जैसे - चिराग़ की लौ

"विस्मय से, बेहद उदास होकर, खिन्न होकर, मुसकराते हुए, हैरान होकर, घृणा से, पूर्ण अवसाद से, व्यंग्यपूर्वक, आँखों में आये आँसुओं को सँभालते हुए, गम्भीरता से, क्रोध से, ग्लानि से, वेदना से द्रवित होकर, चिंतित होकर, जज्बात से काँपकर आदि अनेक सात्विक भावों के अभिनय के लिए काफी स्थान उपलब्ध हैं।

अँधेरे का बेटा -

जैसे - भड़ककर, चौंककर, बहुत गंभीर होकर, हँसकर, हैरान होकर, उदासी से झिझककर, तेजी से, व्यंगपूर्वक, चीखकर, नर्मी से कुछ देर देखकर, साँस छोड़ते हुए, पलक झपकाते हुए, गर्दन झुकाकर, आँखों की तरफ देखकर, बुरीतरह चौंककर आदि ।

न धर्म, न ईमान -

जैसे - चिढ़कर, दूसरी तरफ आँखे करके, तड़पकर, हल्के कटु हास्य से, बहुत उदास और भावातुर होकर, गंभीर होकर, गर्दन हिलाते हुए, घबराकर दरवाजे की ओर देखते हुए, चिंतित, कटु व्यंग्य से, हैरान गहरा सांस लेकर, कड़वी मुसकराहट के साथ, उत्तेजना से, बौखलाकर, विव्हल होकर, संयम करके आदि अनेक सात्विक भावों को शर्माजी के नाटकों में अभिनय के लिए काफी स्थान उपलब्ध हैं । सूक्ष्म सात्विक अभिनय संबंधी दिये गए निर्देश, अभिनय पक्ष विषयक निर्देश, 'रेवतीसरन शर्मा' के गहरे अध्ययन का परिचय देते हैं । उन्होंने पात्रों के भावों और मनःस्थितियों को गहराई से व्यंत्रित किया हैं। संवादों के आदि, मध्य और अंत में दिये गए इन निर्देशों से अभिनेताओं को अपनी भूमिकाएँ निभाने में तथा निर्देशक के निर्देशन में विशेष सहायता मिल जाती है ।

इस प्रकार शर्माजी के 'चिराग़ की लौं', 'अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' अभिनेय की दृष्टि से सफल नाटक है । उस में अभिनय के विभिन्न पहलुओं को मंचीत करने की क्षमता है ।

4.3.6 रूपसज्जा (वेशभूषा) -

शर्माजी के चिराग़ की लौं, अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान इन नाटकों में शर्माजी ने चरित्रों की रूपसज्जा और वेशभूषा विषयक आवश्यक रंग-संकेत दिये हैं । रूपसज्जा के बारें में - डा. गोविंद चातक लिखते हैं - ''वेशभूषा मंचपर एक वातावरण निर्माण करती है । उसका सबसे बड़ा उद्देश्य एक ओर प्रेक्षक को पात्र की प्रतीति होती है, तो दूसरी ओर नाटक की व्याख्या । व्याख्या से तात्पर्य यह है कि वेशभूषा के माध्यम से हीं प्रेक्षक पात्र के देश-काल वातावरण, अवस्था, आर्थिक स्तर, मनोविज्ञान आदि के संबंध में अपना एक बिंब बनता है ।'' [26] अर्थातः रूपसज्जा ही वास्तव में अभिनेता का पात्र की भूमिका में रूपांतरण करती है । अतः रूपसज्जा तथा वेश-भूषा का नाटक में महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

'चिराग़ की लौं' यह आधुनिककालीन नाटक है, नाटककार ने रूपसज्जा तथा वेशभूषा विषयक अनेक संकेत दिये हैं, जिससे देश-काल, अवस्था, आर्थिक स्तर आदि का ज्ञान होता है -

जैसे - प्रथम दृश्य में - "तारा ने हैंड्लूम की चेक की धोती पहनी है, किशोर ने क़मीज ओर पाजामा पहना है। गिरीश की वेशभूषा विषयक संकेत तिसरे दृश्य में दिये हैं, उम्दा सूट पहना है, सिरपर सफेद हैंट है ।" तारा और किशोर के वार्तालाप से किशोर के वेशभूषा विषयक संकेत मिलते हैं -

जैसे - "तारा - लेकिन कोट और टाई .....

किशोर - (निर्णयात्मक स्वर से) भई, बस यही काम मुझसे न होगा । रानी जी, आप ही इन्साफ़ कीजिये कि इस गर्मी के मौसम में टाई ओर कोट पहनने से बड़ी सजा और क्या हो सकती है ?

तारा - तो वह सिल्क की टरबेनाइज्ड कालर की कमीज़ ही पहन जाइये । या यह वह भी तकलीफ़ देती हैं ?" [27]

नाटककारने अन्य पात्रों की वेशभूषा विषयक भी संकेत दिये हैं :- सेठजी के लिए पगड़ी, सफ़ेद कोट और धोती, मुनीम के लिए पगड़ी, कुरता और धोती, ड्राइवर के लिए नीलीवर्दी कैप, समैत, बैरे के लिए सफेद वर्दी आदि ।

दृश्य के अनुरूप परिवर्तित रूपसज्जा -

दृश्य के अनुरूप रूपसज्जा विषयक भी संकेत दिये हैं - जैसे:

जयंत की बहुत देर से उठने की आदत है । जयंत अभी नींद से उठ गया हैं । इस दृश्य के अनुरूप उसकी वेशभूषा विषयक संकेत दिये हैं - जैसे - "जयंत के मुँह में पाईप है, बदन पर नाइट गाऊन है, चेहरे पर सेव का साबुन लगा हुआ है ।" [28] तारा आरंभ में आर्थिक स्थिति के कारण हैंड्लूम की धोती पहनती है - लेकिन जब वह रानी के साथ जाने लगती है, गिरीश के दफ्तर में नौकरी करती है, तब आर्थिक आय के साथ उसकी वेशभूषा में भी बदलाव आ जाता है । पाँचवे दृश्य में इसका उल्लेख किया गया है । सातवे दृश्य में तारा का क़ीमती साड़ियों, फर का कोट, काला चश्मा पहनना इसलिए संभव हो गया है कि अब वह भ्रष्टाचार से हजारों रूपये कमाती है ।

अतः स्पष्ट है, आर्थिक स्तर के अनुरूप तारा की वेशभूषा में नाटककार ने अंतर दिखाया है। रानी के लिए सिल्क और रेशम की क़ीमती रंग-बिरंगी साड़ियों का उल्लेख नाटक के दूसरे दृश्य में हुआ है। जयंत एक मिल-मालिक है, जो अपने घर में नौकर, कार, टेलिफोन रखने की क्षमता रखता है। अतः जयंत एक संपन्न व्यक्ति होने के कारण उसका सूट-बूट, टाय आदि रूप सज्जा से सज्जित होना आवश्यक है। इसप्रकार नाटककार ने आर्थिक स्तर तथा दृश्य के अनुरूप परिवर्तित रूपसज्जा विषयक भी संकेत दिये हैं।

'अँधेरे का बेटा'- यह आधुनिक कालीन नाटक है, नाटककार ने रूपसज्जा तथा वेशभूषा विषयक कुछ संकेत दिये हैं। वेशभूषा के बारें में डॉ.वशिष्ट नारायण त्रिपाठी लिखते हैं-"वेशरचना के द्वारा न केवल चरित्र की बाह्य रूपरेखा, उसकी उम्र, उसकी वर्गिय स्थिति और नाटकीय कार्य व्यापार एवं अन्य चरित्रों से उसका संबंध ज्ञात होता है। अपितु इसके द्वारा उसका स्वभाव, उसके आंतरिक मनोभाव आदि का भी ज्ञान होता हैं।"[29] इसप्रकार वेशभूषा और रूपसज्जा द्वारा पात्र को हम सही रूप में पहचान सकते हैं।

जैसे - 'अँधेरे का बेटा' नाटक के प्रथम अंक में सूबेदार बादशाह खाँ की विधवा पत्नी सकीना की वेशभूषा विषयक संकेत दिए हैं -

"कपड़े सादे, चूड़ीदार-पाजामा, ढीला-सा कुरता और सिरपर दुपट्टा।"[30]

' न धर्म, न ईमान' नाटक में भी नाटककारने वेशभूषा विषयक कुछ संकेत दिये हैं। वेशभूषा तथा रूप विन्यास रंगमंच की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। "नाटक की रचना चाहे शास्त्रीय नियमावली के भीतर हुई हो अथवा लोकनाट्य शैली में लिखा नाटक हो, उच्च कोटि की साहित्यिक नाट्य कृति हो अथवा दक्षिण भारत के शास्त्रीय नृत्य में वेशभूषा तथा मुख सज्जा का विशेष महत्त्व होता है। "[31]

जैसे - प्रथम दृश्य में - दया, एक पतली -दुबली, साधारण कपड़, पहने, तीखे नक्शेवाली लड़की है।"[32]

इससे दया की आर्थिक स्थिति का संकेत मिलता है। नाटककार ने ' चिराग़ की लौं नाटक में रूपसज्जा तथा वेशभूषा विषयक समग्र संकेत दिये हैं। उस में नाटककार ने आर्थिक स्तर तथा दृश्य अनुरूप

परिवर्तित रूपसज्जा विषयक भी अनेक संकेत दिए हैं । मगर अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों में नाटककार ने अंक के आरंभ में ही कुछ संकेत दिए हैं।

4.3.7 दृश्यसज्जा-(दृश्यबंध)

रंगमंचीय अभिकल्पना का एक महत्त्वपूर्ण तत्व दृश्यबंध है। किसी भी नाटक का वस्तुविन्यास तथा अंक-विभाजन दृश्यबंध की संकल्पनापर ही निर्भर करता है। दृश्यबंध के साथ दृश्यसज्जा या मंचसज्जा शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। दृश्यबंध के बारें में डॉ.गोविंद चातक ने लिखा है- '' दृश्यबंध या सेटिंग किसी दृश्य की वह अलंकारिक या सादृश्यमूलक पृष्ठभूमि है, जो प्रायः पूरे नाटक में कभी बदलती कभी एक सी रहती है। व्यापक अर्थ में इसे रंग संस्कार भी कह सकते हैं। दृश्यसज्जा इस अर्थ में वह मंचीय विधान है, जो नाटकीय क्रिया-व्यापार विकासमान स्थितियों में देश और काल की अभिव्यक्ति के लिए विभिन्न दृश्यावलियों का उपयोग करता है।''[33] इस प्रकार दृश्य सज्जाकार अपनी दृश्ययोजना से अभिनेता के लिए आवश्यक वातावरण निर्माण करता है। इस वातावरण निर्माण के आधारपर मंचपर देश-काल का सत्याभास प्रस्तुत किया जाता है।

शर्माजी के विवेच्य नाटकों की दृश्यसज्जा या दृश्यबंध इस प्रकार है -

'चिराग़ की लौं' नाटक के प्रथम अंक का दृश्यबंध एक कमरा है, जो किशोर का निवासस्थान है। दूसरे अंक का दृश्यबंध रानी का ड्राईंग रूम है। पहले और तीसरे अंक का दृश्यबंध एक ही है। अतः प्रस्तुत नाटक के मंचन के लिए दो प्रकार की दृश्यसज्जा अनिवार्य है। नाटककार ने नाटक के मंचीय सुविधा के हेतु यथार्थ शैली की दृश्य सज्जा का आयोजन किया है।

नाटककार ने नाट्य रचना करते समय रंगमंचीय विकास को मद्दे नजर रखते हुए अत्यंत सरल दृश्य सज्जा का आयोजन किया है। प्रथम अंक के लिए आधुनिक ढंग के किशोर के कमरे की दृश्यसज्जा इसप्रकार बताई है:- ''एक साधारण-सा कमरा, जिस में सामान ठिक तरह से लगाया नहीं जा सका है। बीच में बेंत का बुना सोफ़ा सेट है, जिसपर गद्दियां रखी हैं। दाहिनी तरफ एक श्रृंगार मेज है, जो नई खरीदी गई है, पर सस्ती है। बीच में मैंटल पीस पर एक पुराने डिज़ाइन के अलार्म की सूई सैट करने के बाद भी भरोसे से नहीं कहा जा सकता। घड़ी के दोनों तरफ दो शीशे के गुलदान हैं, जिन्हें अभी फूलों का इंतजार है। बायीं तरफ एक बुक-रैक है, जिस में

बहुत-सी किताबे हैं। कोने में एक लिखने की मेज और कुर्सी है। बाहर का दरवाजा दाहिनी तरफ है और अंदर का बायी तरफ।"[34]

'चिराग़ की लौं' नाटक का दृवितीय अंक रानी के ड्राईंग रूम में खेला गया है। लेकिन नाटककार ने रानी के ड्राईंग रूम की रूप सज्जा विषयक विस्तार से कोई संकेत नहीं दिये हैं। केवल इतना लिखा है- "रानी का शानदार ड्राईंग रूम।"[35] लेकिन नाटककार ने रानी के ड्राईंग रूम में स्थित चीजों की सूची पुस्तक के आरंभ में ही दी है- जिससे यह अनुमान किया जा सकता है कि रानी के ड्राईंग रूम की सज्जा किस प्रकार होगी। रानी के ड्राईंग रूम में निम्न चीज़े होने का जिक्र किया है- बढ़िया पर्दे, तीन सेट, शानदार सोफ़ा सेट, दीवान उसका कवर और चौकोर, गद्दियाँ, पिडास्टल लैम्प, टेबल लैम्प, गुलदान, गमले फूलों के, क़ालीन, रेडियो, सेंटर टेबल, शीशे की टॉपवाली, छोटी तिपाइयाँ, गाव तकिया, टेलिफ़ोन, तबला आदि। प्रथम अंक के लिए दृश्यसज्जा में एकदम हल्के-फुल्के परिवर्तन से दृवितीय अंक के लिए दृश्यसज्जा निर्माण में कोई बड़ी या तात्विक बाधा नहीं रह जाती। शर्माजी ने 'चिराग़ की लौं' नाटक के लिए दो दृश्यबंधों की योजना की है, लेकिन वह अत्यंत सरल है। अतः दृश्यसज्जा के निर्माण में कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता।

'अँधेरे का बेटा' नाटक के प्रथम अंक का दृश्यबंध केन्टोमेंट में मेजर नारंग के बंगले का ड्राईंग रूम है। दूसरे और तीसरे अंक का दृश्यबंध मेजर नारंग के बंगले का वही कमरा है। प्रस्तुत नाटक के मंचन के लिए केवल एक ही प्रकार की दृश्यसज्जा आवश्यक है। नाटककार ने नाटक की सुविधा हेतु यथार्थ शैली की दृश्यसज्जा का आयोजन किया है।

नाटककार ने नाट्यसज्जा करते समय रंगमंचीय विकास को सामने रखते हुए अत्यंत सरल दृश्यसज्जा का आयोजन किया है। नाटककार ने प्रथम, दृवितीय और तृतीय अंक के लिए आधुनिक ढंग के मेजर नारंग के बंगले के ड्राईंग रूम का प्रयोग किया है। इसके संबंध में उन्होंने लिखा है-"केन्टोमेंट में मेजर नारंग के बंगले का ड्राईंग रूम।"[36] इस प्रकार नाटककार ने 'अँधेरे का बेटा' इस नाटक के लिए केवल एक ही दृश्य सज्जा का प्रयोग किया है।

'न धर्म, न ईमान' के प्रथम अंक का दृश्यबंध एक पुरानी हवेली का कमरा है। दूसरे अंक का दृश्यबंध एक मामूली से मकान का आँगन है। पहले और तीसरे अंक का दृश्यबंध दिनेश का वही मामूली सा कमरा है। अतः प्रस्तुत नाटक के मंचन के लिए दो प्रकार की दृश्यसज्जा अनिवार्य है।

नाटककार ने नाट्य रचना करते समय रंगमंचीय मद्दे सामने रखते हुए अत्यंत सरल दृश्यसज्जा का आयोजन किया है। प्रथम अंक के लिए पुराने ढंग की दिनेश के कमरे की दृश्यसज्जा इसप्रकार बताई है:- ''एक पुरानी हवेली का कमरा। बार्यी तरफ एक मसहरीदार- पलंग पिछली दीवार के साथ बिछा है। इसके सराहने की तरफ किताबों का रैक है। दार्यी तरफ उपरले कोने में अन्दर हवेली में जाने का रास्ता है। इसी तरफ, नीचे को जूते रखने का रैक है। बाहर से आने का दरवाजा बार्यी तरफ है। फर्नीचर के नाम पर कमरे में एक कुर्सी है, दो गोल मूढे हैं, जिन पर गहरे उन्नाबी रंग का गिलाफ़ चढ़ा है।''[37]

'न धर्म, न ईमान' नाटक के दूवितीय अंक का दृश्यबंध एक मामूली से मकान का आँगन है। नाटककार ने मकान के आँगन की दृश्यसज्जा विषयक विस्तार से कोई संकेत नहीं दिये हैं। केवल इतना ही लिखा है- ''मामूली से मकान का आँगना।''[38] प्रथम अंक के लिए दृश्यसज्जा में एकदम हल्के -फुल्के परिवर्तन से दूवितीय अंक के लिए दृश्यसज्जा निर्माण में कोई बड़ी बाधा नहीं रह जाती। अतः नाटककार ने इस नाटक के लिए दो दृश्यबंधों की योजना की है, जो अत्यंत सरल है। अतः दृश्यबंध निर्माण में कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता ।

'रेवतीसरन शर्माजी' ने 'चिराग़ की लौं' 'अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' इन नाटकों के दृश्यसज्जा विषयक विस्तार से कोई संकेत नहीं दिये हैं। उन्होंने 'चिराग़ की लौं' और 'न धर्म, न ईमान' के लिए दो दृश्यबंधों की योजना की है, तो 'अँधेरे का बेटा' के लिए एक ही दृश्यबंध की योजना की है। मगर वह अत्यंत सरल है। अतः इन नाटकों के दृश्यसज्जा निर्माण में कठिनाइयों का सामना करना नहीं पड़ता।

4.4 प्रकाश योजना -

मंचसज्जा में प्रकाश योजना का अपना महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रकाश रंगकला का एक सर्जनात्मक आयाम है। नाट्यस्थल और समय को प्रदर्शित करने की दृष्टि से प्रकाश योजना का महत्त्व है। प्रकाश के कारण वातावरण निर्मिती होती है। प्रकाश योजना से आधुनिक रंग प्रस्तुति अत्यंत सहज, सुलभ हो गई है। रंगमंच पर नाटकों के भावों, घटनाओं, स्थानों, ऋतुओं या देश-काल वातावरण को अभिव्यंजित करने के लिए प्रकाश योजना की समुचित और कलात्मक उपयोगिता की जाती हैं। डॉ.वसिष्ट नारायण त्रिपाठी लिखते हैं- ''वस्तुतः प्रकाश रंगकला का एक ज्यादा सर्जनात्मक आयाम है। रंगमंचपर प्रस्तुत चरित्रों, घटनाओं एवं अन्य दृश्यों को दृश्य बनाने के साथ इन चीजों के अंर्तसंबंधों इनकी विशिष्टताओं और उनकी सूक्ष्मताओं पर स्वयम् नजर रखना और उन्हें दूसरों को नजर आनेलायक ही नहीं, ग्रहण करने योग्य बना देता है। इसी प्रकाश व्यवस्था का ही दायित्व है यह नाट्यस्थितियों -भावनाओं और संवेगों को प्रकाशित करता हुआ एक पूर्ण विकसित नाट्यार्थ तक पहुँचता है और पहुँचाता हैं।''[39]

प्रकाश योजना के लिए आधुनिक काल में कई प्रकार के यांत्रिक विद्युत उपकरण भी काम में लाये जाते हैं। रंगमंचपर प्रकाश के धनत्व-बढ़ाने-घटाने के लिए कई यांत्रिक विधियों का प्रयोग करते हैं। पुँजदीप(स्पॉट लाइट) महादीप(फ्लड़ लाइट) जैसे कई माध्यम प्रकाश की गुणवत्ता में यथेष्ट अंतर प्रस्तुत करने की क्षमता रखते हैं। इस में पुंजदीप प्रकाश योजना बहुत महत्त्वपूर्ण है। फिल्मों में कॅमेरे को विशेष कोण पर प्रकाश केंद्रित करके अपेक्षित चीज़ों, भावों या मुद्राओं को जिस रूप में व्यक्त किया जाता है, लग-भग उसी प्रकार की काम रंगमंच पर पुंजदीपद्वारा लिया जाता है। इसके लिए अभीष्ट वस्तुपर प्रकाश केंद्रित करके रंगमंच पर स्थित शेष चीज़ों को अँधेरे में डाल दिया जाता है या वहाँ का प्रकाश कम कर दिया जाता है।

विद्युत प्रकाश की उपलब्धि से प्रकाश योजना रंगमंच की एक महत्त्वपूर्ण कला बन गयी है। इस संदर्भ में डा.तुकाराम पाटील के विचार महत्त्वपूर्ण है,-''आजकल प्रकाश के विविध यांत्रिक उपकरणोंद्वारा विभिन्न कोण,गीत,धनत्व आदि निश्चित करके नाटकीय स्थितिओं को व्यंजित किया जाता हैं । पुंजदीप (Spot Light), तलदीप(Foot Light), अंचलदीप (Border Light), प्रतिबंधक (Reflecter), महादीप(Flood

Light) आदि प्रकाश उपकरणोंद्वारा अभिनेता के चेहरे के हाव-भाव, अंतर्द्वद्व, मानसिक घात-प्रतिघात तथा नाटक के स्थूल-सूक्ष्म क्रिया-व्यापार को उजागर किया जाता है।'' [40]

शर्माजी के विवेच्य नाटकों में प्रकाश योजना का सफल प्रयोग हुआ है। उन्होंने अपने नाटकों में रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति, पुंजदिप प्रकाश योजना 'अँधेरे के बाद प्रकाश योजना, रंगीन प्रकाश योजना आदि का प्रयोग किया हैं।

4.4.1 रोशनी बुझाकर दृश्य - समाप्ति -

'रेवतीसरन शर्मा' ने 'चिराग़ की लौं' 'अँधेरे का बेटा'' न धर्म, न ईमान' नाटकों की दृश्य समाप्ति रोशनी बुझाकर की है - सात दृश्यों में विभाजित 'चिराग़ की लौं' नाटक में अनेक जगह रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति की है -

जैसे - प्रस्तुत नाटक में प्रथम अंक के दूसरे दृश्य के अंत में तारा और किशोर में झगड़ा होता है। तारा रोती हुयी अंदर चली जाती है और उसी वक्त रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति होती है।

तारा अमीर घर की बेटी होकर भी मध्यमवर्गीय किशोर के आदर्शवाद और ईमानदारी पर मुग्ध होकर उसके साथ प्रेम विवाह करती है मगर आर्थिक स्थिति ठीक न होने से उन दिनों में बार-बार झगड़े होते हैं। नाटककार ने यहाँ तारा के माध्यम से प्रेम के खोखले आदर्श को दिखाया है।

'अँधेरे का बेटा' नाटक में भी अनेक जगह रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति की है। जैसे -

प्रस्तुत नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य के अंत में पत्नी द्वारा प्रताड़ित और कलंकीत मेजर नारंग अपने को लगा हुआ कलंक मिटाने के लिए अपना तबादला अत्याधिक खतरे की जगह कर लेते हैं। जाते वक्त वे अपनी बेटी तथा पत्नी को मिलना चाहते हैं, मगर पत्नी उनसे बात नहीं करती। तब मेजर नारंग वही से चले जाते हैं। निरूपमा हाथों में अपना मुँह छिपाकर अंदर चली जाती है, और रोशनियाँ बुझाकर दृश्य समाप्ति होती है।

नाटककार ने यहाँ सूचित किया है कि महत्त्वाकांक्षी पत्नी निरूपमा अपनी महत्त्वाकांक्षापूर्ति के लिए अपने पति को जान कुर्बान करने को विवश करती है ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक में भी अनेक जगह रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति की है -

जैसे - ''दया का सारा तनाव खत्म हो जाता है और आल्हाद और आत्मसमर्पण के साथ वह दिनेश के सीने पर

सिर रखकर आँखे मूँद लेती है । रोशनियाँ बुझ जाती हैं । प्रस्तुत नाटक का नायक दिनेश दया के लिए 'देवदास' बन जाता है और उसका विवाह हो जाने पर भी उसके प्यार में जीता है, बीमारी की अवस्था में उसे अपना खून देकर उसकी जान बचाता है, और अंत में उसे पत्नी के रूप मे स्वीकार करता है ।

नाटककार ने यहाँ सूचित किया है कि दया का सिसक-सिसक कर भरने की अपेक्षा साहस से स्वतंत्र होकर जीना ही अधिक उचित है ।

4.4.2 अँधेरे के साथ प्रकाश योजना -

शर्माजी के 'चिराग़ की लौं' और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों में अँधेरे के साथ प्रकाश-योजना का प्रयोग हुआ है -

'चिराग़ की लौं', नाटक के प्रथम अंक के दृवितीय दृश्य में अँधेरे के साथ प्रकाश रोशनी का नाटकीय कथावस्तु के सूचक रूप में प्रयोग किया है । इस दृश्य में मंचपर अँधेरा होता है, यह अँधेरा सूचक रूप में किशोर और तारा के जिंदगी में आये अँधेरे को व्यक्त करता है । किशोर आदर्शवादी और ईमानदार इन्कमटैक्स अफ़सर होने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है, मगर जब तारा की बचपन की सहेली रानी, तारा को अपने घर ले जाकर अनेक क़ीमती वस्तुएँ भेंट दे देती हैं, तब उनकी आर्थिक स्थिति सुधर जाती है ।

मंच पर पूरा अँधेरा किशोर और तारा के आर्थिक स्थिति का सूचक है, तो एक क्षण बाद रोशनी होना उनकी आर्थिक स्थिति सुधर जाने का सूचक है । शर्माजीने नाटकीय कथावस्तु को सूचित करने के लिए अँधेरे के साथ प्रकाश योजना का सफल प्रयोग किया है ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक के तृतीय अंक में अँधेरे के एक क्षण बाद प्रकाश रोशनी का नाटकीय कथावस्तु के सूचक रूप में प्रयोग किया है । इस दृश्य में डाक्टर जाने के साथ ही सब रोशनियाँ बुझ जाती हैं । मंचपर अँधेरा दया की जिंदगी में आये अँधेरे को व्यक्त करता है । दया तो तपेदीक की बीमारी हुई है । डाक्टर, दया की दादी और उसका पति रादयाल को समझाने का प्रयास करते हैं, मगर अधःविश्वास के कारण वे इलाज करने के अलावा भगवान पर भरोसा करके व्रत रखने को कहते हैं । अब उसके जिंदा रहने की आशा नहीं बची । डाक्टर जाने के बाद मंचपर अँधेरा दया की जिंदगी में आये अँधेरे को सूचित करता है । मगर जब दिनेश दया को अस्पताल में भर्ति कराके उसे अपना खून देकर उसकी जान बचाता है, और पत्नी के रूप में उसका स्वीकार करता है, तब मंचपर प्रकाश होता है ।

इस प्रकार शर्माजी ने विवेच्य नाटकों की कथावस्तु को सूचित करने के लिए अँधेरे के कुछ क्षण बाद प्रकाश रोशनी का सफल प्रयोग किया हे ।

4.4.3 पुंजदीप प्रकाश योजना -

रेवतीसरन शर्मा के चिराग़ की लौं और अँधेरे का बेटा नाटकों के अंतिम दृश्यों में पुंजदीप प्रकाश योजना का नाटकीय प्रयोग किया है । पुंजदीप प्रकाश योजना के कारण वातावरण निर्मिती और सूच्य प्रसंगों की निर्मिती होकर वर्णनात्मक पुनरावृत्ति कम हुई है । नाटक में ये सूच्य दृश्य काफ़ी महत्त्वपूर्ण है और ये दृश्य और विवरण आगे की घटनाओं का पूर्वाभास तो कराते हैं, और दर्शकों के मन में नाटकीय कथावस्तु को जानने की उत्सुकता भी भर देते हैं । लेकिन चिराग़ की लौं और अँधेरे का बेटा में तृतीय अंक के अंतिम दृश्य में पुंजदीप प्रकाश योजना का प्रयोग कर दृश्य समाप्त किया है ।

'चिराग़ की लौं' इस नाटक में तृतीय अंक के अंतिम दृश्य के अंत में सारी लाइटे किशोर के चेहरेपर पड़ जाती है, और परदा दाएँ-बाएँ से आकर उसे ढँक लेता है । भौतिक सुखों की लालची तारा रिश्वत लेकर अपने प्यार को बचाना चाहती है । मगर ईमानदार किशोर अपनी पत्नी का साथ छोड़कर उससे दूर चला जाता है । तब सारी लाइटें किशोर के चेहरे पर पड़ती है । नाटककार ने पुंजदीप प्रकाश योजना का प्रयोग कर उस समय की किशोर की मनःस्थिति को दिखाया है । इसे दिखाकर नाटककार ने दर्शकों का ध्यान किशोर की

ईमानदारी और आदर्शवाद की ओर आकर्षित किया है । नाटक के अंत में सारी लाइटे किशोर के चेहरेपर पड़ती हैं, इस संकेतद्वारा गंभीर वातावरण का निर्माण किया है । किशोर के भावात्मक और निश्चयात्मक रूप का प्रभाव दर्शकों के दिलों दिमागपर छा जाता है ।

'अँधेरे का बेटा' नाटक के तृतीय और चतुर्थ दृश्य के आरंभ में पुंजदीप प्रकाश योजना का प्रयोग हुआ है । प्रस्तुत नाटक के तृतीय अंक के तृतीय दृश्य में - ''मेजर नारंग लड़ाई के वर्दी में, हाथ में नक्शा, गले में दूरबीन और कंधेपर स्टैन गन लटकाए नजर आएँ । यह पाकिस्तान फ्रंटपर कोई मोर्चा है, जहाँ मेजर नारंग तैनात है । उनके चेहरेपर रोशनी का सिर्फ एक स्पॉट पड़ता है ।[41]

पुंजदीप प्रकाश योजना का प्रयोग कर नाटककार ने पाठकों का ध्यान मिलिट्री ऑफ़िसर मेजर नारंग की ओर आकर्षित किया है , क्या मेजर नारंग पहली तरह अपनी जान बचाने के लिए युद्ध से भाग आयेंगे, या लड़ते-लड़ते, देश के लिए वीरगति प्राप्त करंगे । नाटककार ने गंभीर वातावरण का निर्माण किया है । मेजर नारंग के निश्चयात्मक रूप का प्रभाव दर्शकों के दिलों दिमागपर छा जाता है । इस प्रकार शर्माजी ने चिराग़ की लौं और अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान नाटकों में प्रकाश योजना का प्रयोग सफलता पूर्वक हुआ है ।

4.4.4 रंगीन प्रकाश योजना -

रेवतीसरन शर्मा के 'चिराग़ की लौं' नाटकों में रंगीन प्रकाश योजना का सफल प्रयोग हुआ हैं । उन्होंने दृश्य में पात्रों के कार्यव्यापारों को प्रकाश के द्वारा संकेत देकर वातावरण निर्माण हेतु प्रकाश संयोजन का प्रयोग किया है -

जैसे - ''तीन बज गये ; सव्वा तीन बजे तो 'सो' शुरू होता है ।''[42]

तीसरे दृश्य में 'दो बजने को आए हैं, और तुम अभी शेव बनाकर नहाने का इरादा कर रहे हो।'[43]

इसके लिए रंगीन प्रकाश योजना सहाय्यक हुई हैं ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि शर्माजी ने 'चिराग़ की लौं' नाटकों में प्रकाश योजना का दृश्य प्रयोजन के लिए सार्थक प्रयोग किया है । प्रकाश विषयक प्रयोग इस नाटकों में कम हैं क्योंकि सन 1960 ई. के आस-पास प्रकाश का मंचपर तकनीकी प्रयोग इतना विकसित नहीं हो पाया था, जैसा आज है ।

4.5 ध्वनि संकेत -

रंगमंच पर नाटक को स्थापित करने में ध्वनि योजना महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । इसके साथ-साथ ये रंगप्रस्तुति को आकर्षक स्वाभाविक और संमोहक बनाने में भी महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं । पात्रों के मनोभाव प्रदर्शित करने की दृष्टि से भी ध्वनि योजना महत्त्वपूर्ण कार्य करती है । मनुष्य के मन के विभिन्न मनोभाव प्रकट होते रहते हैं । इन विभिन्न मनोभावों को प्रकट करने के लिए विविध प्रकार की ध्वनि प्रयोगों की सहायता ली जाती हैं । डा. केदारनाथ सिंह ने रंगप्रस्तुति के बारें में मुख्यतः तीन प्रकार की ध्वनियों का उपयोग माना है - ''व्यावहारिक और प्राकृतिक ध्वनियाँ, वाद्य ध्वनियॉं और संगीत ध्वनियाँ ।''[44] आधुनिक काल में लाऊड्स्पीकर, टेपरिकार्ड़र विविध वाद्य आदि की सहायता से रंगमंच पर भीड़ के अर्थहीन कोलाहल से लेकर मेघगर्जना, बिजली की कडक, डाकिया की आवाज आदि अनेक प्रकार की ध्वनियों को सुनवाया जा सकता हैं । टेलिफोन ने भी संवाद कला को एक नया आयाम दिया है । ध्वनिसंकेतों के सहायता से भी रंगमंच पर वातावरण के यथार्थ को अधिक गहरा रंग प्रदान किया जा सकता है ।

शर्माजी के विवेच्य इन नाटकों में विविध ध्वनि संकेतों का यथेष्ट मात्रा में सार्थक प्रयोग हुआ है । ये ध्वनि संकेत सूच्य कथाभाग को दर्शाने तथा वातावरण निर्मिती करने में सहायक सिद्ध हुए हैं -

4.5.1 [redacted] डाकिया की आवाज -

'चिराग़ की लौं' नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में डाकिया के बुलाने की आवाज प्रयुक्त हुई हैं । किशोर के घर से चिठ्ठी आती है । चिठ्ठी लेकर किशोर पढ़ता है और तारा को बताता है कि पिताजी ने पैसे मँगाये हैं । तब उन दोनों में झगड़ा होता है । प्रयुक्त आवाज संघर्ष को सूचित करती है ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक के तृतीय अंक में डाक़िया की आवाज प्रयुक्त हुई है । दिनेश के पिताजी चिठ्ठी लेकर पढ़ते हैं और चौंक जाते हैं क्योंकि दिनेश को कानपूर में स्कूल मास्टर की नौकरी मिल गई हैं और ये बात उसने घर में किसी को नहीं बतायी । प्रयुक्त आवाज उस घर के वातावरण को सूचित करती है ।

इस प्रकार 'चिराग़ की लौं', और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों में डाकिया की आवाज प्रयुक्त हुई है ।

4.5.2 अलार्म (घड़ी) की आवाज -

'चिराग़ की लौं' नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में अलार्म की आवाज प्रयुक्त हुई है । आवाज सुनकर नसीम हँसते हुए अलार्म बंद कर देता है और कहता है ऐन वक्त पर अगाह किया, मगर किशोर उसे खतरे की घंटी समझता है । प्रयुक्त आवाज खतरे को सूचित करती है ।

4.5.3 दस्तक -

'चिराग़ की लौं' नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में सेल्समैन किशोर के घर में प्रवेश करने से पूर्व दरवाजे पर दस्तक देता है, जो उसके शिष्टाचार पालन का निर्देशक है । इसी दृश्य में ड्राईक्लीन करनेवाला 'लड़का' तथा कमीशन एजंट 'गिरीश' घर में प्रवेश करने से पूर्व दरवाजे पर दस्तक देकर शिष्टाचार पालन करते हैं ।

'अँधेरे का बेटा', इस नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में कर्नल नगांयच दरवाजे पर दस्तक देकर घर में प्रवेश करते हैं। इस प्रकार शर्माजी के विवेच्य नाटकों के कुछ दृश्यों में शिष्टाचार पालन के लिए दरवाजे पर दी दस्तक का प्रयोग हुआ है ।

4.5.4 वेद, मंत्र तथा मंत्रोचारण -

'न धर्म, न ईमान' नाटक के दूवितीय अंक के दूवितीय दृश्य में दया के घर में पंड़ितजी के वेद, मंत्र पढ़े जाने की आवाज प्रयुक्त हुई है, जो उस घर के धार्मिक वातावरण तथा अध:विश्वास को दिखाती है । जो प्रसंगानुकूल और नाटकीय कथावस्तु के अनुरूप है । दया को तपेदीक की बीमारी हुई है, मगर उसके पति

रामदयाल और दादी उसका इलाज करने की अलावा अंधःविश्वास या धार्मिक भावना के कारण घर में पूजा पाठ स्तोत्र तथा मंत्रोचारण आदि का प्रयोग करते हैं ।

4.5.5 दूधवाले की आवाज -

'चिराग़ की लौ' नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में बाहर से दूधवाला तारा को आवाज देता है - 'बीवीजी दूध ले जाओ ।'[45] प्रयुक्त आवाज दूधवाले के आने का संकेत देती है ।

4.5.6 टेलिफोन की आवाज -

शर्माजी के 'चिराग़ की लौं' ओर 'अँधेरे का बेटा' नाटकों में अनेक जगह टेलिफोन की घंटी बजने की आवाज प्रयुक्त हुई हैं -

जैसे - चिराग़ की लौं नाटक के दूसरे अंक के प्रथम दृश्य में फोन की घंटी बजती है । जलदी से जाकर रानी फोन उठाती है । उसकी सहेली बताती है कि प्राईम मिनिस्टर ने इनवीटेशन एक्सेप्ट कर लिया है । खुशी से नाचते हुए यह बात वह तारा को बताती है । प्रयुक्त आवाज रानी के दिखावटीपन को सूचित करती है ।

अँधेरे के बेटा इस नाटक में भी अनेक जगह टेलिफोन की आवाज प्रयुक्त हुई है -

जैसे - इस नाटक के प्रथम अंक के प्रथम दृश्य में टेलिफोन की घंटी बजते ही मेजर नारंग तेजी से फोन उठाते हैं और वे अपने सुपरसेशन होने का कारण पत्नी से छिपाने के लिए जल्दी से फोन रख देते हैं । दूसरी बार जब मिसेज ग्रेवाल का फोन आता है, तब निरूपमा स्वयम् फोन उठाती है । तब मिसेज ग्रेवाल बताती है - "उन्हें कार नहीं मिली, तो उनका प्रमोशन हुआ है ।"[45] प्रयुक्त आवाज उन दोनों में होनेवाले संघर्ष को सूचित करती है ।

4.5.7 फायरिंग की आवाज -

'अँधेरे का बेटा' नाटक के प्रथम अंक के आरंभ में थोड़े - थोड़े अवकाश के बाद चाँदमारी पर चल रहे फायरिंग की आवाज सुनायी देती है, जो युद्ध को सूचित करती है ।

4.5.8 जोर से हँसने की आवाज -

शर्माजी के 'चिराग़ की लौं' और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों में जोर से हँसने की आवाज प्रयुक्त हुई हैं - 'चिराग़ की लौं नाटक में द्वितीय अंक के प्रथम दृश्य में - जयंत गिरीश को कहता है - "तुम हर चीज़ कमीशन पर हासिल करना चाहते हो और बीवी कमीशन का नहीं, मोनोपोली का मामला है ।" [47] यह सुनकर रानी जोर से हँसती है । गिरीश के व्यभिचारी वृत्ति को सूचित करती है ।

'न धर्म, न ईमान ' नाटक का नायक दिनेश उसके घर में आश्रित युवा लड़की दया से प्यार करता है और उससे शादी करना चाहता है जो दूर के रिश्ते से उसे बहन लगती है । अपने शादी के बारें में दिनेश जब पिताजी से कहता है, कि मैं शादी करना चाहता हूँ । तब पिताजी जोर से हँसते हैं । प्रयुक्त आवाज संघर्ष को सूचित करती है ।

4.5.9 बिजली की कड़क और बादल के गरजने की आवाज -

'अँधेरे का बेटा' नाटक के द्वितीय अंक के द्वितीय दृश्य में बिजली की कड़क तथा बादल के गरजने की आवाज प्रयुक्त हुई है । प्रयुक्त आवाज खतरे को सूचित करती है ।

4.5.10 बुलाने की आवाज -

शर्माजी के 'चिराग़ की लौं' और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों के कुछ दृश्यों में बुलाने की आवाज प्रयुक्त हुई है जो नाटकीय सूच्य घटनाओं का वर्णन करती है, पात्रों के आचार-विचार व्यक्त करती है ।

'चिराग़ की लौं', नाटक में रिश्वतखोर इन्कमटैक्स आंफ़िसर मि. मेहता और मिसेज मेहता किशोर और तारा का नया मकान देखने उनके घर आते हैं । दो रूम में सजा किशोर और तारा का मर्यादीत संसार

देखकर, मिसेज मेहता अपनी अमीरी का रोब दिखाते हुए तारा पर बार-बार व्यंग्यबाण चलाती है, तब तारा रोती हुई अंद र चली जाती है । तब किशोर उसे बुलाता है । ‘‘[redacted] ? ([redacted]।) [redacted]’’ प्रयुक्त आवाज उनके घर में होनेवाले संघर्ष को सूचित करती है ।

‘न धर्म, न ईमान’ नाटक का नायक दिनेश दया से शादी करने का फैसला करता है । और यह बात वह पिताजी से कहता है । यह बात पूछने के लिए दिनेश के पिताजी दिनेश के दादी को बाहर बुलाते हैं । प्रयुक्त आवाज दादी के उस घर के अधिकार को सूचित करती है । इस प्रकार चिराग़ की लौं, और न धर्म, न ईमान नाटकों के कुछ दृश्यों में आवाजों का सार्थक प्रयोग हुआ है ।

4.5.11 टेप रिकार्ड़र की आवाज -

‘अँधेरे का बेटा’, नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में टेपरिकार्ड़र के गाने की आवाज आती है । निरूपमा टेपरिकार्ड़र स्टार्ट करती है । बार बार एक के बाद एक गाने को रिजेक्ट करके टेप आगे चलाती है । फिर गाना आता है - फिर एका - एक टेपरिकार्ड़र बंद करती है । प्रयुक्त आवाज निरूपमा के द्विधा मनःस्थिति को सूचित करती है ।

4.5.12 चीखने की आवाज -

रेवतीसरन शर्मा के ’अँधेरे का बेटा’ और ‘न धर्म, न ईमान’ नाटकों में चीखने की आवाज प्रयुक्त है -

‘अँधेरे का बेटा’ नाटक के द्वितीय अंक के द्वितीय दृश्य में निरूपमा के चीखने की आवाज सुनायी देती है । निरूपमा जब अपने पति के सुपरसेशन होने का कारण जान जाती है तब वह पति की बार बार प्रताड़ना करती है । नीरू उन्हें पति मानने से भी इन्कार करती है, तब मेजर नारंग उसे कहते हैं -

‘‘नारंग - मेरे लिए तुम्हारी जिंदगी में कोई जगह नहीं ?

नीरू - (चीखकर) हाँ, हाँ, हाँ ! ’’ [48]

प्रयुक्त आवाज पति-पत्नी के संघर्ष को सूचित करती है ।

'न धर्म, न ईमान' नाटक के दूवितीय अंक के दूवितीय दृश्य में रामदयाल की चीखने की आवाज प्रयुक्त हुई है । दया को खाँसी आती है, खाँसते-खाँसते एकदम वह खून की उल्टियाँ कर देती हैं । खून देखकर रामदयाल चीखता है|- चीखने की आवाज घबराहट को सूचित करती है ।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि शर्माजी के विवेच्य नाटकों में विविध ध्वनि संकेतों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ हैं । इनके प्रयोगों से वातावरण निर्मिती और सूच्य कथा भागों पर प्रकाश पड़ता है ।

4.6 गीत - संगीत योजना -

'रेवतीसरन शर्मा' के 'चिराग़ की लौं' और 'अँधेरे का बेटा' नाटकों में गीत-संगीत योजना का बड़ा सार्थक प्रयोग हुआ है - जैसे - 'चिराग़ की लौं' नाटक के दूवितीय अंक के प्रथम दृश्य में गीत-संगीत योजना का सफल प्रयोग किया है । इस नाटक में उन्होंने संगीत विषयक भी कुछ संकेत दिये हैं -

जैसे - रानी भरतनाट्य सीख रही है । उसे भरतनाट्य सीखाने के लिए एक मदरासी डांस टीचर भी है । नाटककार ने मंच पर रानी के प्रत्यक्ष नृत्य की रचना की है । अतः वाद्य संगीत के लिए तबले का प्रयोग किया है । इस प्रकार संगीत प्रत्यक्ष मंचपर दिखायी देता है ।

अँधेरे का बेटा -

जैसे - इस नाटक के तृतीय अंक के प्रथम दृश्य में निरूपमा टेप-रिकार्ड़र स्टार्ट करती है । एक गाना आता है, उसे रिजेक्ट करके टेप आगे चलाती है । फिर गाना आता है । इस प्रकार हम देखते हैं कि विवेच्य नाटकों में गीत संगीत का प्रयोग सफलता से हुआ है ।

4.7 संवाद -

संवाद नाटक का प्राणतत्व है । रेनाल्ड पीकाक ने कहा है - ''कथन या भाषा कार्य व्यापार, कथावस्तु तनावों का एजेण्ट है । कथन पात्रों के संबंधियों और उनकी भावनाओं का विकास एवं परिवर्तन शीलता

की लगातार गति को प्रकट करने की सक्रिय भाषा है । बाह्य कार्य व्यापार तथा उद्देश्य दोनों को भाषा का कथन स्पष्ट बनाता है। "[49] अर्थातः कथावस्तु को आगे बढ़ाने में ओर पात्रों के चरित्र-विकास में संवाद महत्त्वपूर्ण होते हैं। नाटक में वातावरण निर्मिती भी संवादों द्वारा की जाती है।

नाटक के पात्रों के आपसी वार्तालाप को संवाद कहा जाता है। संवाद के आवश्यक गुण हैः- संप्रेषणीयता, स्वाभाविकता, पात्रानुकूलता, विषयानुकूलता, प्रवाहमयता, संक्षिप्तता आदि। रेवतीसरन शर्मा के चिराग़ की लौं अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान नाटक संवाद योजना की दृष्टि से सफल है। विवेच्य नाटकों में प्रयुक्त संवाद, भावानुकूल, पात्रानुकूल, व्यंगात्मक एवं अरबी-फारसी उर्दू मिश्रित है। नाटककार संवाद योजना में अधिक सचेत दिखाई देते हैं। विवेच्य नाटक एक हद तक विचार-प्रधान होते हुए भी नाटककारने हास्य-व्यंगात्मक एवं भावात्मक संवादों का प्रयोग किया हैं।

4.7.1 पात्रानुकूल संवाद -

शर्माजी ने ' चिराग़ की लौं, 'अँधेरे का बेटा' और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों में पात्रानुकूल संवाद का प्रयोग किया है। पात्रानुकूल प्रयोग के कारण नाटक में स्वाभाविकता आ जाती है। जैसेः-'चिराग़ की लौं' नाटक में सेठ भोगीलाल मारवाडी होने के कारण- "न-नः, भगवान की दया से न कहो इन्शपिक्टर शाहब- बैदजी की दया से कहो। ऐसी-ऐसी भस्म देवे हैं कि कुछ मत पुछो । उन्हीं के बूते पर तो छोटी सेठानी लाया हूँ। "[50]

'अँधेरे का बेटा' नाटक में मेजर नारंग और निरूपमा दोनों भी उच्चशिक्षित है साथ ही मेजर नारंग मिलिट्री आंफ़िसर होने के कारण उनके अधिका-धिक संवादों में अंग्रेजी का प्रयोग हुआ है -

जैसे - "नारंग :- येस --- स्पीकिंग --- ओ.सी. साहब ? (चौंकना हो जाता है।) सर? --- क्या फायरिंग एक्सीडेंट हो गया है--- जाना होगा? में अभी आ रहा हूँ। (जाने के लिए मुड़ता है।)

नारंग - एक फायरिंग एक्सीडेंट हो गया है।

नीरू - तुम क्यों? वह क्यों नहीं , जिन्हें प्रमोशन मिला है? गेट मी फाइव थ्री सेवन कर्नल नगायंच --- । "[51]

'न धर्म, न ईमान' नाटक में पुराने विचारोवाली दादी, दया को दूसरे का खून देने की अपेक्षा उसे उसीतरह मरवाने की सलाह रामदयाल को देती है ।

''दादी - अगर बेटी के बदन में बाप के अलावा किसी और का खून मिल जाए ?

रामदयाल - वेश्यापुत्री ।

दादी - तो अक्ल के कोल्हू ! तू अपनी लुगाई के बदन में जाने किस -किस का खून डलवा के उसे क्या बनाने जा रहा है ? अरे, उसकी जान तो सोख ली, अब उसका अगला जन्म तो खराब न कर। ''[52] इस प्रकार शर्माजी के विवेच्य नाटकों में पात्रानुकूल संवाद का सफल प्रयोग हुआ है।

4.7.2 भावात्मक संवाद -

रेवतीसरन शर्मा के 'चिराग़ की लौं' अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान' नाटकों के संवादों में भावुकता और कोमलता के दर्शन होते हैं- जैसे -

''तारा - अच्छा, अब मैंने अपने शब्द वापस लिये। अब जाओ। (हाथ पकड़कर उठाती है) ज़रा मेरे जूड़े में यह फूल ठीक तरह से लगा दो। मेरा, हाथ नहीं जाता।

(तारा श्रृंगार-मेज के पास आ खड़ी होती है, किशोर फूल लगाता है। फूल लगाने के बाद भी वह हटता नहीं आईने में तारा को देखता रहता है।)

तारा- (शोखी से गर्दन मोड़कर उसकी ओर देखते हुए) ए, यह क्या है? कभी देखा नहीं?

(किशोर गर्दन हिलाता है।)

ताराः- (पलटकर हैरानी से) मुझे कभी नहीं देखा

किशोरः- (गर्दन हिलाते हुए) इतना नहीं देखा कि देखने की चाह न रहे। "[53]

'न धर्म, न ईमान' नाटक का नायक दिनेश उसके घर में आश्रित युवा लड़की दया से प्यार करता है। वे दोनों शादी करना चाहते हैं, मगर पुराने खयालों वाली दादी उनकी शादी का विरोध करती है। दादी दया की शादी उसकी इच्छा के विरूद्ध अधेड़ उम्र के रामदयाल से करा देती है। मगर अंतर्मन से दिनेश को

चाहनेवाली दया रामदयाल से शादी करके सुखी नहीं होती। बीमारी की अवस्था में जब दिनेश, दया को मिलने आता है,तब उनके संवादों में भावुकता और कोमलता के दर्शन होते हैं -

"दिनेश - सच, दया ! जानता हूँ तुम मेरी नहीं हो सकती। मैं तुम्हें नहीं पा सकता, पर जाने क्यों तमन्ना है कि जब ज़िंदगी से जी बहुत घबरा जाए तो दिनों बाद न सही, बरसों बाद ही तुम्हारी एक झलक मिल जाए । दिल का टूटा हुआ काँच तुम्हारी दमक से हीरे की तरह जगमगा जाए।

दया - ऐसे न कहो दिनेश, ऐसे न कहो। प्यार करके मैंने नहीं तुमने एहसान किया है। मेरी ज़िंदगी में कुछ नहीं था , बस एक तुम थे। एक तुम्हारी आँख थी, जिसने मेरे लिए आँसू का मोती उगला था। मैंने उस आँसू को मन की अंगूठी में जड़ कर अपना श्रृंगार करना चाहा। पर वह भी किसी को न भाया।

दिनेश - पर यह मोती आज भी तुम्हारा है। पलकों की दहलीज खड़ा आज भी तुम्हारे सपने देखता है।"[54]

'अँधेरे का बेटा' नाटक में अपने प्रथम कर्तव्य से भागने के कारण पत्नीद्वारा प्रताड़ित मेजर नारंग युद्ध के लिए जाते हैं, तब पत्नी उससे बात भी नहीं करती तब भावुकतावश अपनी बेटी से कहते हैः-

"नारंग - (सीने से लगाकर) बेटे, मेरे बेटे! जिन्दगी में कोई किसी को कुछ नहीं देता। दे नहीं सकता, सिवा दाग के, गम के, शर्म के, क्यों कि आदमी जला हुआ पेड़ है। कपडे काले करता है। पर मैंने ऐसा बनना कभी नहीं चाहा। नेचर ने धागा कच्चा बाँधा। वह खुल गया और मैं वह गुलेल बन गया । इसीलिए मेरी पीठ पर अँधेरे के उँगलियों की छाप हैं। (तभी निरूपमा दरवाजे में नजर आती है) पर तुम अपनी मम्मी से कह सकती हो, तुम शर्मिंदा नहीं होगी। तुम्हारा डैडी तुम्हें वह दाग़ नहीं देगा जो खुद लिए फिरता है।"[55]

इस प्रकार शर्माजी के विवेच्य नाटकों में भावात्मक संवाद का प्रयोग सफलता से हुआ है।

4.7.3 व्यंग्यात्मक संवाद -

रेवतीसरन शर्मा ने ' चिराग़ की लौं', अँधेरे का बेटा और न धर्म, न ईमान नाटकों में व्यंग्यात्मक संवाद का प्रयोग किया है। उन्होंने चिराग़ की लौं नाटक में वर्तमान युगीन नौकरी करने की तथा-कथित आधुनिकतापर किशोर के माध्यम से व्यंग्य किया है:-

जैसे - ''किशोर :- काम? मुझे बताओं तुम क्या काम कर सकती हो? तुम्हें बिज़नेस आता है ? एकाउण्ट आता है? टाइप आती है ?

तारा - मेरा.... मेरा काम और होगा । मैं दफ़्तरों में जाऊँगी।

किशोर - (घृणा और ग्लानि से) और अपनी निगाहों,अपनी मुसकराहटों, अपने कपड़ों से झाँकते बदन की रिश्वत देकर लोगों से खिलाफ कानून काम कराओगी ? अपना औरतपन बेचकर औरों के ईमान खरीदोगी? ।''[56]

'अँधेरे का बेटा' नाटक में निरूपमा कॉलेज के दिनों संतोष नामक सहपाठी से प्यार करती है, मगर विवाह एक मिलिट्री आंफ़िसर से करती है तब सिपाही पर व्यंग्य करते हुए संतोष कहता है-

''संतोष - मादाम, कत्ल क़त्ल है - चाहे किसी का हो, किसी लिए हो, कितने ही बिल्ले, मैडल, डेकोरेशन लगा-लगाकर किया जाए।

निरूपमा - तुम जैलस हो ! जलते हो कि मैंने तुम से नहीं, एक मिलिट्री ऑफ़िसर से शादी की !

संतोष - सही है । लेकिन अगर तुमने किसी कलास फोर सर्वेंट से शादी की होती तो क्या मैं उस पर मर्डर होने का इल्जाम लगा सकता था ?''[57]

'न धर्म, न ईमान' में पुरातन मतवादी दादी के अंधःविश्वासू प्रवृत्तिपर व्यंग्य करते हुए डाक्टर कहते है -

''डाक्टर :- मुक्ति का इतना खयाल है, तो तुम दे दो। तुम तो इसकी दादी हो ।

दादी - मैं .... मैं क्यों होती ... ऐसे रिश्ते मानने लगूं तो सारे जगत् की दादी न बन जाऊं !

डाक्टर :- बहुत खूब ! जिस दिन पोता शादी करने चला था, उस दिन यह उसकी बहन थी, लेकिन आज तुम्हारी पोती ही नहीं !।''[58]

4.7.4 अरबी -फारसी तथा उर्दू -

शर्माजी के 'चिराग़ की लौं', और अँधेरे का बेटा, नाटकों में अरबी-फारसी तथा उर्दू संवाद का भी प्रयोग हुआ है - नसीम शायर है। अतः उसकी भाषा में अरबी-फारसी तथा उर्दू शब्दों का प्रयोग हुआ है । अत: उसकी भाषा अरबी फारशी तथा उर्दू शब्दों का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है । '' लेकिन वे जो बे - आवाज़ हैं, वे जो अपने सीनों में सितम के खंजर सहते हैं पर चिल्लाने की ताकद नहीं रखते, उनकी आवाज़ कौन बुलंद करेगा ?'' [59]

'अँधेरे का बेटा' नाटक में सकीन की बोली में अधिकाधिक उर्दू शब्दों का प्रयोग हुआ है । ''जी, फ़रमाइये..... वे बस आनेवाली हैं....आप फ़रमाइएँ, आप कब तशरीफ़ लाएँगे ? । .... जी, आप ब-शौक तशरीफ ला सकते है। ......जी, क़तई नहीं ! आदाब अर्ज !''[66]

इस प्रकार शर्माजी के विवेच्य नाटकों के संवाद पात्रानुकूल, भावात्मक व्यंग्यात्मक और अरबी-फारसी तथा उर्दू मिश्रित है । संवाद योजना की दृष्टि से विवेच्य नाटक सफल है। विवेच्य नाटकों के संवादों में विविधता तथा मर्मपर्शीता हैं।

4.8 रंगमंचीय प्रस्तुति और दर्शकिय संवेदना -

नाटक के रंगमंचीय आयामों में रंगमंचीय प्रस्तुति का अपना अलग महत्त्व हैं। किसी भी नाटक का प्रस्तुतिकरण नाटककार नाटक में दिये गए रंग संकेतों के आधारपर तथा किसी कुशल निर्देशक के निर्देशन पर किया जाता है। रंगमंचीय प्रस्तुति में नाटककार और निर्देशक के साथ-साथ अन्य रंगकर्मियों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। नाटक रंगमंच पर खेला जाता है- और दर्शक उसे देखने का आनंद लूटते हैं । नाटक और दर्शक के परस्पर संबंध को डॉ. चंदूलाल दुबेजी लिखते हैं-''नाटक और दर्शक अन्योन्याश्रित है। नाटक देखने के लिए दर्शक आते हैं। दर्शकों के लिए नाटक खेले जाते हैं। दर्शकों के अभाव में नाटक का प्रदर्शन असंभव है। नाटक

दर्शकों पर अपना प्रभाव डालता है, तो दर्शक भी नाटक को प्रभावित करते हैं। नाटक की कथावस्तु, संगीत एवं अभिनय से सहृदय दर्शक प्रभावित होता है। "[61]

नाटककार रेवतीसरन शर्मा ने लिखा है कि दिल्ली के रंगमंच पर केवल हास्य-विनोदपूर्ण नाटकों को ही सफलता मिलती है जिस में लतीफेबाजी हो लैंगिक छेड़छाड़ हो, उटपटांग घटनाओं की भरमार हो, इसप्रकार की गलतफहमी दिल्ली के रंगमंच के लिए लिखनेवाले नाटककारों और निर्देशकों की हो गई थी। अतः रेवतीसरन शर्मा को भी कॉमेडी लिखने की बजाय 'चिराग़ की लौं' जैसे गंभीर, विचारप्रधान नाटक लिखकर दे दिया। नतीजा यह निकला कि दिल्ली के नाटक देखनेवालों ने कॉमेड़ी की अपेक्षा इस गंभीर और विचार प्रधान नाटकों को देखना अधिक पसंद किया । नाटककार लिखते हैं - ''लेकिन मुझे यह तर्जुबा करके बड़ी खुशी हुई, कि दिल्ली के नाटक देखने वालों पर जो लांछन लगाया जाता है, वह बड़ी हदतक मंच नाटककारों की अपनी उथली प्रवृत्ति, विचार शून्यता और अपने कलम पर अविश्वास की परछाई है। दिल्ली में गंभीर नाटकों के प्रति कोई एलर्जी नहीं है। यहाँ के लोग न केवल उसे पसंद करते हैं., बल्कि उससे गंभीर स्थलों और विचारशील संवादोंपर उससे भी ज्यादा ज़ोरदार दाद देते हैं, जैसी कि आमतौर पर मनोरंजक स्थलों पर देते हैं।''[62]

'न धर्म, न ईमान, शर्माजी का आदर्शवादी नाटक है। इसके संबंध में नाटककार लिखते हैं - ''नाटक का कथानक भी 'आधुनिक नहीं है। इस में एक युवक एक युवती के लिए ' देवदास' बन जाता है और लड़की का विवाह हो जानेपर भी उसके प्यार में जीता है और जब वह अपने पति को छोड़कर उसके पास आती है तो उसे स्वीकार करता है।''[63] शर्माजी ने लिखा है नाटक का अंत पाठकों और दर्शकों के मस्तिष्क में कई सवाल पैदा कर सकता है। विवाहित दया का दिनेश के पास चले जाना अनैतिक है। उसे अपने पति के पास रहना चाहिए। जब यह नाटक दिल्ली में श्री. कारन्थ के निर्देशन में खेला गया तब भी यही सवाल उठे थे। कुछ अभिनेताओं का विचार था कि दया को अंत में अपना फैंसला बदल देना चाहिए और अपने पति के घर लौट जाना चाहिए। उनके अनुरोध पर पहले दिन नाटक का अंत ऐसे ही किया गया। परंतु दूसरे दिन अंत ऐसा रखा गया, जैसा इस नाटक में है और सबको हैरानी हुई कि दर्शकों ने इस अंत को मुक्त कंठ से सहारा। उन्होंने सिसक-सिसककर मरने की बजाए साहस से, स्वतंत्र होकर जीने को ज्यादा सराहा। सबने दर्शकों के इस फैसले के सामने सिर झुकाया।

स्पष्ट है शर्माजी के विवेच्य नाटक दर्शकीय संवेदना को झकझोर देनेवाले हैं साथ ही दर्शक को प्रभावित करनेवाले सफल नाटक हैं।

निष्कर्ष -

जीवन में जिस प्रकार सुसंगति आवश्यक है, उसी प्रकार रंगमंच पर नाटक व्यवस्था तथा उसकी प्रस्तुति में संगति आवश्यक है। रंगमंचीय नाटक एक सामुहिक कला निर्मिति है, और उसका आस्वादन समूह दूवारा होता है। नाटक में नाटककार, अभिनेता, निर्देशक तथा अन्य रंगकर्मियों का योगदान रहता है। नाटकीय उपकरणों से ही नाटक सफलता से प्रस्तुत किये जाते हैं।

रेवतीसरन शर्माजी ने मंचीय दृष्टि से नाटकों में प्रयोग किये हैं। शर्माजी के ' चिराग़ की लौं', 'अँधेरे का बेटा, और न धर्म, न ईमान' रंगमंच और अभिनय की दृष्टि से सफल नाटक हैं । अतः नाटककार ने इन नाट्य रचनाओं का सृजन करते समय रंगमंच और अभिनय संबंधी पर्याप्त रंगनिर्देश दिये हैं। आंगिक, वाचिक, अभिनय के साथ साथ सात्विक अभिनय के भी अनेक अवसर प्रदान किए हैं। नाटककार ने पात्रों के भावों और मनःस्थितियों को गहराई से व्यंजित किया है, जिससे रंगकर्मियों को अपनी भूमिकाएँ अदा करने में सहायता मिलती है। रूपसज्जा मंचपर एक वातावरण तैयार करती है। रूपसज्जा विषयक आवश्यक रंगसंकेतों के साथ दृश्य के अनुरूप तथा आर्थिक स्तर के अनुरूप परिवर्तित रूपसज्जा विषयक भी सूक्ष्म संकेत या निर्देश दिये हैं।

इन नाटकों के मंचन के लिए 'चिराग़ की लौं 'और 'न धर्म, न ईमान' के लिए दो प्रकार की तो 'अँधेरे का बेटा' के लिए एक प्रकार की दृश्यसज्जा आवश्यक है। लेकिन इस में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रथम प्रकार की दृश्यसज्जा में थोड़े परिवर्तन से दूसरे प्रकार की दृश्यसज्जा की जा सकती है। सरल दृश्यसज्जा इनकी विशेषतः हैं। नाटककार ने प्रकाश-योजना का प्रयोग अंक तथा विभाजन के साथ वातावरण निर्मिती के लिए किया है। प्रकाश-योजना के अंतर्गत-रोशनी बुझाकर दृश्य समाप्ति, अँधेरे के साथ प्रकाश-रोशनी, पुंजदीप प्रकाश-योजना और रंगीन प्रकाश-योजना को स्थान दिया है।

नाटककार ने ध्वनि संकेतों के अंतर्गत-डाकिया की आवाज, घड़ी की आवाज, दरवाजे पर दी दस्तक, वेद, मंत्र तथा मंत्रोचारण, दूधवाले की आवाज, टेलिफोन की आवाज, फायरिंग (गोली) की आवाज, जोर से

हँसने की आवाज, बिजली की कड़क और बादल गरजने की बुलाने की आवाज, टेपरेकार्ड़र आवाज और चीखने की आवाज आदि का यथास्थान प्रयोग किया हैं । इससे नाटक में स्वाभाविकता आ गयी है। प्रसंग या घटना के अनुरूप संगीत की प्रत्यक्ष योजना मंचपर की गई है। पार्श्वध्वनि और संगीत का सफल प्रयोग हुआ है।

विवेच्य नाटकों में प्रयुक्त संवाद पात्रानुकूल, भावानुकूल, व्यंग्यात्मक तथा अरबी-फारसी और उर्दू मिश्रित है। विवेच्य नाटक दर्शकीय संवेदना को झकझोर देनेवाले तथा दर्शकों को प्रभावित करनेवाले हैं। 'चिराग़ की लौं और 'न धर्म, न ईमान' नाटकों का प्रथम प्रयोग दिल्ली के 'कला-साधना मन्दिर' में हुआ है।

इसप्रकार रेवतीसरन शर्मा के नाटक रंगमंचीयता और अभिनेयता की दृष्टि से अत्यंत उत्कृष्ठ और सफल हुए हैं।

संदर्भ -सूची

1. सं.डॉ. शिवराम माळी और सुधाकर गोकाककर - नाटक और रंगमंच (डॉ. चंदूलाल दुबे अभिनंदन ग्रंथ) - पृ.194

2. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - रंगमंच और नाटककार की भूमिका - पृ-194

3. सं. राजमल बोरा. नारायण शर्मा -हिंदी नाटक और रंगमंच -डॉ. चंदूलाल दुबे : रंगमंच : सैद्धांतिक स्वरूप - पृ.84, 85

4. डॉ.नरनारायण लाल - कोणार्क : रंग और संवेदना - पृ. 64

5. डॉ.वीणा गौतम और सुरेश गौतम - नटशिल्पी - डॉ.शंकर शेष - पृ.200

6.डॉ. चंदूलाल दुबे : हिंदी रंगमंच का इतिहास- पृ.20

7.डॉ. सुभाष भाटिया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन - पृ.87

8. सं. राजमल बोरा, नारायण शर्मा -हिंदी नाटक और रंगमंच - डॉ. भगवानदास वर्मा : समकालीन नाटककार पृ-144

9. डॉ. भगवानदास वर्मा : समकालीन नाटककार पृ-149

10. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - आधुनिक हिंदी नाटक और रंगमंच - पृ.22

11. डॉ. सुभाष भाटिया - लक्ष्मीनारायण लाल का रंगदर्शन - पृ.195

12. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.दो शब्द से

13. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.दो शब्द से

14. डॉ. जीवन प्रकाश जोशी - नाटककार मोहन राकेश - पृ.17

15. डॉ. सुषमापाल मल्होत्रा - प्रसाद के नाटक तथा रंगमंच - पृ.30

16. सं. महादेवशास्त्री जोशी - भारतीय संस्कृति कोश(मराठी)चतुर्थखंड - पृ.185

17. डॉ. गोविंद चातक - रंगमंच कला और दृष्टि - पृ. 17

18. डॉ. नरनारायण राय- कोणार्क : रंग और संवेदना - पृ.65

19. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.2

20. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.8

21. डॉ.रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.3-4

22. डॉ. गोविंद चातक - रंगमंच कला और दृष्टि - पृ.41

23. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.86

24. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.37

25. डॉ.रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.6

26. डॉ. गोविंद चातक - रंगमंच : कला और दृष्टि - पृ.56

27.डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.25

28. वही, वही पृ.40

29. डॉ. वशिष्ट नारायण त्रिपाठी - नाटक के रंगमंचीय प्रतिमान - पृ.174

30. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.1

31. डॉ. रीतारानी पालीवाल - रंगमंच : नया परिदृश्य - पृ.60

32. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.1

33. गोविंद चातक - रंगमंच : कला और दृष्टि - पृ.47

34. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.1

35. वही, वही पृ.33

36. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.1

37. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.1

38. वही, वही पृ.24

39. डॉ. वशिष्ट नारायण त्रिपाठी - नाटक के रंगमंचीय प्रतिमान - पृ.164

40.डॉ तुकाराम पाटील - सामसामायिक हिंदी नाटकों में खंडित व्यक्तित्व - अप्रकाशित

41.डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.96

42.डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.8

43.वही, वही पृ.40

44. डॉ. केदारनाथसिंह - हिंदी के प्रतिक नाटक और रंगमंच - पृ.61

45. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.75

46. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.40

47. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.41

48. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.75

49. डॉ. गिरिजा सिंह - हिंदी नाटकों में शिल्पविधि- पृ.330

50. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.16-17

51. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.35-36

52. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.85

53. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.18

54. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.44-45

55. डॉ. रेवतीसरन शर्मा -न धर्म, न ईमान - पृ.56

56. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.84

57. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.18-19

58. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.54-55

59. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.57

60. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - अँधेरे का बेटा - पृ.6

61.संपा. शिवराम माळी - नाटक और रंगमंच - डॉ.चंदूलाल दुबे अभिनंदन ग्रंथ पृ.244

62. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - चिराग़ की लौं - पृ.दो शब्द से

63. डॉ. रेवतीसरन शर्मा - न धर्म, न ईमान - पृ.दो शब्द से